समापन-निवेदन: क्या “स्त्रियों का प्रश्न” सचमुच इतना महत्वपूर्ण है?

Hans-Jörg Ronsdorf · मई 2021 · अक्टूबर 2026 में संशोधित

एक बहन ने मेरा ध्यान इस ओर दिलाया कि इस प्रश्न में बात (केवल) धर्मविज्ञान की नहीं है। बात मनुष्यों की है। बात लड़कियों और स्त्रियों की, और उनकी गरिमा और उनके सम्मान की है। एक पुरुष होने के नाते मैं इस पूरे विषय को पुरुष के दृष्टिकोण से देखता हूँ, जो सीधे स्त्रियों की आवाज़ को व्यक्त नहीं करता, परन्तु उनके पक्ष में बोलता है।

मुझे आशंका है कि इस पदानुक्रमिक-धार्मिक ढाँचे (पूरकतावाद) ने बहुत सी स्त्रियों के भीतर कुछ घायल या नष्ट कर दिया है। मेरी पुस्तक पर मिली थोड़ी-सी प्रतिक्रियाएँ इस आकलन की पुष्टि करती हैं। वास्तविक संख्या इससे बड़ी होगी, विशेषकर जब मैं उन युवा स्त्रियों और लड़कियों के विषय में सोचता हूँ, जो समान अधिकार वाले समाज में बड़ी होती हैं, परन्तु अपने मसीही कलीसियाई परिवेश में प्राचीन काल के लैंगिक भूमिका-आदर्शों से “शिक्षा” पाती हैं। इस दुविधा से कैसे निपटा जाए?

बात कुछ (वर्जित) सेवाओं की नहीं है

स्पष्ट कर दूँ: बात मुख्य रूप से यह नहीं है कि स्त्रियों को प्रचार करने, शिक्षा देने या अगुवाई करने की अनुमति नहीं है। बहुत सी स्त्रियाँ वैसे भी इसकी आदी हो चुकी हैं, और इस बात की ओर उनकी दृष्टि ही नहीं रही कि इसमें कभी कुछ बदल सकता है। अक्सर वे इन ढाँचों और नियमों को अपने लिए बाइबलीय सत्य मानती हैं और स्वयं इन मान्यताओं पर अब प्रश्न नहीं उठातीं। परन्तु उन्हें ऐसा करना चाहिए। मैं इसे सत्य की पहचान के लिए एक स्वस्थ संघर्ष कहूँगा – विशेषकर तब, जब कोई यह सोचता है कि यह समझ आदिम कलीसिया के समय से निर्विवाद रूप से चली आ रही है। यह बात बाइबल के बहुत से विषयों पर लागू होती है। कभी-कभी विषयों को फिर से शुरू से अक्षर-अक्षर पढ़ना पड़ता है।

शीर्षक का प्रश्न लगभग झुँझलाई हुई प्रतिक्रिया है इस बात पर कि मैं अपनी पुस्तक (शीर्षक: “स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए!” (Frauen, vergebt uns!)) और लेखों के द्वारा बार-बार ये (“नारीवादी”) प्रश्न उठाता हूँ। मेरे विचार में यह प्रश्न यह कहना, या इस बात को हल्का करना, चाहता है: बहनों के पास कलीसिया में, परमेश्वर के राज्य में और परिवार में सहयोग करने और अपने वरदानों को विकसित करने के इतने सारे कार्य और अवसर हैं, कि यदि उन्हें प्रचार करने, शिक्षा देने या अगुवाई करने की अनुमति न हो, तो यह कोई भेदभाव नहीं हो सकता। हर किसी का अपना स्थान और अपनी भूमिका है, जैसी सृष्टि की व्यवस्था ने पहले से निर्धारित कर दी है।

परन्तु यदि कोई पूरी तस्वीर देखने का प्रयास करे, तो बात उन दो-तीन सेवाओं की नहीं है, जो कथित रूप से स्त्री का अधिकार नहीं हैं। बात स्त्री के प्रति उस पूरे दृष्टिकोण की है, जो इसके पीछे है। इस प्रश्न के पीछे – कि क्या यह सचमुच इतना महत्वपूर्ण है – यह धारणा है कि स्त्री को आदम के लिए एक (अधीन) सहायक के रूप में रचा गया और वह पदानुक्रम में उसके अधीन, उसके नीचे या उसके बाद रखी गई है। **यही उस समस्या की जड़ है, जिससे बहुत सी (सब नहीं) स्त्रियाँ पीड़ित हैं**। बाहर से अक्सर दिखाई न देने वाली एक भीतरी, गहराई में छिपी असुरक्षा है, अन्याय की एक भावना। जब स्त्री को, स्त्री होने के नाते, पुरुष के समान आदर नहीं दिया जाता। जब किसी को अपने विचारों में स्वतंत्र होकर नहीं, बल्कि व्यवस्था जैसी सीमाओं में सोचना और काम करना पड़ता है

(मुझे क्या करने की अनुमति है और क्या नहीं), जिन्हें धार्मिकता का आवरण पहना दिया जाता है। स्त्री की भूमिका के विषय में यह दृष्टिकोण प्रभु में बहुत सी बहनों को सताने वाले प्रश्नों और आत्म-संदेह के साथ छोड़ देता है। वे स्वयं से पूछती हैं कि परमेश्वर ने ऐसा क्यों चाहा, जब तक उनके मन में यह ठूँसा जाता है कि यही परमेश्वर की योजना है। यदि परमेश्वर भला और सिद्ध है, तो मसीही विवाहों में स्त्रियाँ बुरी बातें क्यों अनुभव करती हैं और कलीसियाओं में ऐसी सीमाएँ क्यों, जिन्हें सामान्य बुद्धि से समझा नहीं जा सकता? **परमेश्वर की आज्ञाएँ सदा भली हैं और वह चाहता है कि हम उनका अर्थ समझें, जो (कम से कम नए नियम में) सदा स्पष्ट होता है। परन्तु इस प्रश्न में कोई भी तर्कसंगतता नहीं दिखती!**

पुरुष क्या अनुभव करते हैं और क्या नहीं

यह एक ऐसी भावना है, जिसे हम पुरुष इस रूप में नहीं जानते। पुरुष कम ही कमज़ोर पक्ष होते हैं। समय आ गया है कि इसे पहचानें और इसके प्रति संवेदनशील हों। कुछ पुरुषों की कल्पना और सोच में स्त्रियों की इन हीनता की भावनाओं को समझ पाना असंभव-सा लगता है।

क्या इस विषय पर इतनी अधिक भावुकता का वास्तविक कारण शायद बाइबल के प्रति निष्ठा कम, और यह अपना घमंड अधिक है कि उसकी अगुवाई की भूमिका, उसका सिर होना, प्रश्न के घेरे में आ गया है? शायद केवल अवचेतन में? कि अचानक पत्नी के भी वही अधिकार और कर्तव्य हों जो पति के हैं? यदि किसी ने दशकों तक इसे अलग ढंग से देखा और जिया हो, तो यह समझ, यदि आती है, भूकंप के समान होती है। केवल भूल को स्वीकार करना ही नहीं, बल्कि एक अलग साझा जीवन के लिए स्वयं को तैयार करना। इसके लिए शक्ति चाहिए। पहले अंतर्दृष्टि। परन्तु बाइबलीय मार्ग जीवन की ओर ले जाता है। सदा।

स्त्रियों के प्रश्न में हम बाइबल कैसे पढ़ते हैं

मैं कोई ऐसा विषय नहीं जानता, जो भावनात्मक रूप से इतना उत्तेजित हो। मानो बात जीवन और मृत्यु की हो। यीशु के व्यक्तित्व, उनके ईश्वरत्व और उनके उद्धार-कार्य जैसे विषयों पर यह समझ में आता, परन्तु इस प्रश्न पर नहीं कि क्या स्त्रियाँ आराधना में प्रार्थना और भविष्यद्वाणी कर सकती हैं (जिसे पौलुस स्वाभाविक रूप से मानकर चलते हैं, यदि कोई ध्यान से देखे, संदर्भ पर ध्यान दे और बाइबल की बड़ी और पूरी तस्वीर पर भी)।

जब स्त्रियों के प्रश्न की बात आती है, तो हम बाइबल कैसे पढ़ते हैं? **क्या हम पूरे विषय को 1 तीमुथियुस 2 और 1 कुरिन्थियों 14 के दो (!) पदों के माध्यम से देखते हैं? यदि हम दूसरे महत्वपूर्ण शिक्षा-संबंधी प्रश्नों में भी बाइबल को इसी तरह दो पदों तक सीमित करके पढ़ें और परखें, तो वास्तव में कैसी विकृत शिक्षाएँ निकलेंगी? और पूरी बाइबलीय सामग्री को एक दूसरे के साथ एक स्वस्थ, विश्वसनीय संबंध में रखे और तौले बिना ही। केवल इसी प्रकार तो स्वस्थ शिक्षा उत्पन्न होती है!**

तब हम शास्त्रियों की तरह पढ़ते हैं और सोचते हैं कि पवित्रशास्त्र में अनंत जीवन मिलता है, परन्तु उससे मिलने से चूक जाते हैं, जिसकी गवाही पवित्रशास्त्र देता है: मसीह (यूहन्ना 5:39)। पवित्रशास्त्र, जिससे हम इतना प्रेम करते हैं, उसकी गवाही देता है, जिसने स्त्रियों को स्वतंत्रता में पहुँचाया – सीखने, अंगीकार करने, गवाही देने और आराधना करने के लिए।

आइए, हम स्त्रियों के विषय में बाइबल की पूरी तस्वीर को सम्मान देना आरंभ करें और उसे पौलुस के दो ग़लत समझे गए वचनों के आधार पर न समझें।

अंतर्बोध

बहुत सी स्त्रियाँ, जब बाइबल पढ़ती हैं, जब यीशु को देखती हैं कि वे स्त्रियों के साथ कैसा व्यवहार करते थे, तो महसूस करती हैं कि कुछ ठीक नहीं है। उनके लिए यह और भी कठिन हो जाता है, जब वे देखती हैं कि जो पुरुष अगुवाई करने और सिर होने वाले हैं या होना चाहते हैं, वे असफल होते हैं – यद्यपि कहा जाता है कि परमेश्वर ने यह भूमिका, स्त्रियों के विपरीत, ठीक उन्हीं को सौंपी है। फिर भी कितनी ही बार पत्नियाँ ही आग से कोयले निकालती हैं (मुश्किल से उबारती हैं)।

अपनी पुस्तक पर मिली प्रतिक्रियाओं में मेरा यही अनुभव है। **पुस्तक का शीर्षक एक ऐसे रिक्त स्थान को भरता प्रतीत होता है, जो बहुत बड़ा है। उससे भी बड़ा, जितना मैंने तब सोचा था, जब मैंने यह शीर्षक चुना।**

अब मैं निश्चय ही ऐसे विवाहों को जानता हूँ – जहाँ तक निकट के लोगों के लिए भी जानना संभव है – जहाँ इस प्रकार का पदानुक्रम प्रेम में जिया जाता है। परन्तु क्या यह इस बात का संकेत है कि तब पदानुक्रम सही और पवित्र है? निश्चय ही नहीं। हम कितनी ही ग़लत बातें सोचते और करते हैं, जिन्हें हम सही मानते हैं, क्योंकि वे किसी न किसी तरह चल तो जाती हैं।

हाँ, "स्त्रियों का प्रश्न" निश्चित रूप से महत्वपूर्ण है। क्योंकि बात परमेश्वर और मनुष्य के विषय में हमारी समझ की है। बात इस समझ की हर विकृति और कुरूपता को मिटाने और सुधारने की है। परमेश्वर हम पर अनुग्रह करे और इस कार्य में हमारी सहायता करे, क्योंकि ग़लत धारणाएँ अकल्पनीय रूप से गहराई में बैठी हैं और बहुतों को ऊपर से ईश्वरीय सत्य भी प्रतीत होती हैं। जबकि यह एक सांसारिक व्यवहार है। यह युग की आत्मा है – पृथ्वी के हमारे भाग में इक्कीसवीं सदी की नहीं, बल्कि बीती हुई बीसवीं और उन्नीसवीं सदी की।

यदि हम पुरुष अपनी पत्नियों से वैसा प्रेम करना चाहते हैं, जैसा मसीह ने कलीसिया से प्रेम किया (इफिसियों 5:25), तो हम उन्हें प्रेम के द्वारा इस ग़लत और भेदभावपूर्ण भूमिका से बाहर निकालेंगे और उनके लिए वह स्थान देंगे और खाली करेंगे, जो परमेश्वर की सृष्टि की व्यवस्था में उनका अधिकार है।

वास्तव में स्त्रियों का प्रश्न गहराई में पुरुषों का प्रश्न है। हम पुरुषों को स्वयं पर प्रश्न उठाना होगा! क्योंकि नए नियम की पदानुक्रमिक और कभी-कभी पितृसत्तात्मक व्याख्या के लिए कौन ज़िम्मेदार है? **पुरुषों ने बाइबल की व्याख्या में सर्वोच्च अधिकार अपने हाथ में ले लिया है और मानते हैं कि यह उनका अपना निजी विशेषज्ञता-क्षेत्र है। कैसा आत्म-अतिरंजन!** आत्मा के वरदान लिंग के अनुसार नहीं बाँटे जाते। इस व्यवहार के कारण स्त्रियों के अनगिनत वरदान भुला दिए गए, दबा दिए गए, निष्क्रिय कर दिए गए, अनदेखे किए गए और मंद कर दिए गए। आत्मा को बुझाना (1 थिस्सलुनीकियों 5:19) सचमुच कोई छोटी बात नहीं है। पुरुष ही तो कलीसियाओं की अगुवाई करते हैं और दिशा तय करते हैं – स्त्रियों को इसमें कुछ कहने का अधिकार नहीं, और यदि है भी, तो केवल अनौपचारिक रूप से अपने पतियों के द्वारा, जो परन्तु अपने अगुवों के मंडल में कभी स्वीकार नहीं करेंगे कि वे अपनी पत्नी की राय पर चल रहे हैं।

मेरा उद्देश्य क्या नहीं है

बात न तो कलीसिया के आधुनिकीकरण की है (बात कमरों और भवनों की नहीं है), न समय के साथ चलने की। **बात यीशु के प्रति निष्ठा की है – और यही बाइबल के प्रति निष्ठा है!** आधुनिकीकरण नहीं, बल्कि स्त्रियों के प्रश्न में सुधार (रिफ़ॉर्मेशन) – "स्त्रियों का प्रश्न" इस संदिग्ध शब्द का एक बिल्कुल अंतिम बार प्रयोग करते हुए।

बात किसी धर्मवैज्ञानिक बहस को जीतने की नहीं है। यह विषय इसके लिए उपयुक्त नहीं है, क्योंकि इससे सीधे मनुष्य (विशेषकर प्रभु में बहनें) प्रभावित होते हैं और हर पक्ष का दृष्टिकोण कलीसिया में, परमेश्वर के राज्य में और विवाह और परिवार में जीवन को गहराई से प्रभावित करता है।

परन्तु फिर भी केवल एक बहस, केवल आपत्ति और केवल भविष्यसूचक संबोधन ही इस विषय को नए सिरे से गति दे सकता है। बातचीत और रचनात्मक वाद-विवाद के बिना यहाँ सब कुछ पहले जैसा ही रहेगा।

अलग होने का कारण?

इस प्रश्न पर भावनाओं का ऊँचा स्तर जल्दबाज़ी और कठोर कार्यवाही की ओर ले जाता है, जो अक्सर अलगाव, विभाजन और फूट में समाप्त होती है। एक पक्ष के लिए एक ईश्वरीय सीमा पार हो जाती है, जो दूसरे पक्ष के लिए है ही नहीं। अब क्या?

तनाव सहना कुछ समय तक चल सकेगा, परन्तु क्योंकि यह प्रश्न दोनों पक्षों के लिए इतना कुछ समेटे हुए है, अंत में एक साथ चलना संभव नहीं होगा। जब तक कि कोई उस बात को सह न सके, जो किसी कलीसिया में प्रचलित रीति है। हाँ, परमेश्वर भी बहुत कुछ सहता है, हमारी कल्पना से भी अधिक, बुरी बात को अच्छा ठहराए बिना।

और इसलिए हर किसी को अपने लिए निर्णय करना होगा। मेरे विचार में इस तनाव में कोई बीच का रास्ता तय करना भी कठिन है, जहाँ लोग एक दूसरे की ओर उतना बढ़ें, जितना वे उचित ठहरा सकें।

क्षमा कीजिए, यदि मैं इस विषय पर कोई समाधान नहीं दे सकता। अलगाव अधिकतर बुरे होते हैं, परन्तु समझौते भी बुरे हो सकते हैं।

स्त्रियों को खड़ा होना होगा

जीवन में कुछ बातें ऐसी हैं, जिन्हें केवल स्वयं ही किया जा सकता है। कोई और उन्हें हमारे लिए नहीं कर सकता। स्त्रियों को उठना होगा, अपना मार्ग पहचानना होगा और ग़लत समझी गई अधीनता से बाहर आना होगा। बड़ी कलीसियाओं में ऐसी स्त्रियाँ हैं, जो जाग गई हैं और पहचान गई हैं कि लिंग के प्रश्न में कुछ बहुत ग़लत है। कोई इन आंदोलनों के विषय में चाहे जो सोचे, परन्तु होशे 8:7 के साथ मैं कहता हूँ: **जो वायु बोता है, वह बवंडर काटेगा।**

Nice Girls Don't Change the World – एक सच्चा वाक्य (भली लड़कियाँ संसार को नहीं बदलतीं; यही लिन हाइबेल्स (Lynne Hybels) की एक पुस्तक का शीर्षक है, 2005)। यह विषय इतना जड़ हो गया है और ऐसा अछूता सत्य बन गया है कि इसके विरुद्ध खड़े होने के लिए एक लाउडस्पीकर भी बिल्कुल उचित है। दूसरी मसीही सच्चाइयों के लिए, जिन्हें उद्धार के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है, ऊँचे स्वर में पुकारा ही जाता है, है न?

दूसरा विकल्प यह है कि सब कुछ जैसा है वैसा ही रहे। ताकि फिर उस महान दिन, उसकी महिमा, स्पष्टता और सत्य के सामने, यह मानना पड़े कि हम ग़लत थे, दोनों लिंग। पुरुष अपनी समझ के साथ और स्त्रियाँ इन कथित बाइबलीय सत्यों को स्वीकार करने के साथ। तब एक बड़ा अवसर खो जाएगा और चला जाएगा, सदा के लिए।

अब न पुरुषों को कायर होना चाहिए, न स्त्रियों को! सत्य के पक्ष में खड़े होने की सदा कुछ क़ीमत चुकानी पड़ती है। **यदि कलीसिया के इतिहास में बार-बार बहुत सी साहसी मसीही स्त्रियाँ और पुरुष साहस के साथ खड़े न होते और धारा के विरुद्ध न तैरते, तो सब कुछ नष्ट हो गया होता।** और यह हम भली-भाँति जानते हैं। मसीहियत का हर आंदोलन और हर धारा – और हम इनमें से किसी न किसी से जुड़े हैं – साहसी और प्रार्थना करने वाली स्त्रियों और पुरुषों के द्वारा आरंभ हुई।

आगे चलकर और अभी

अनंत काल में यह विषय हमारा पीछा नहीं करेगा। तब न कोई भावावेश होगा, न कोई आरोप या लांछन। पुरुष और स्त्री बस भाई और बहन के समान होंगे; पदानुक्रम और एकतरफ़ा अधीनता इतिहास बन जाएँगे – एक पतित संसार और बिगड़ी हुई सृष्टि-व्यवस्था का अतीत।

तो आइए, हम अभी से, जहाँ तक हम पर निर्भर है, उस नई सृष्टि की स्वतंत्रता और सामर्थ को जिएँ, जो हम पुनर्जीवित और महिमान्वित मसीह में बन गए हैं!